[2008] 7 एस.सी.आर. 435

गुरुस्वामी नादर

बनाम

पी. लक्ष्मी अम्मल (डी) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य

(सिविल अपील सं. 6764/2001)

1 मई, 2008

[ए. के. माथुर और लोकेश्वर सिंह पांटा, जे.जे.]

संपति हस्तांतरण अधिनियम, 1882- धारा 52 लिस पेंडेंस का सिद्धांत (लंबित वाद का सिद्धांत) – प्रयोज्यता - विशिष्ट पालन के लिए वाद का लंबित होना- स्वामी द्वारा दूसरे खरीददार को उसी सम्पत्ति का पश्चातवृति विक्रय- निर्धारितः चूंकि संपति का दूसरा विक्रय करने से पहले वाद दायर किया गया था इसलिए लिस पेंडेंसी का सिद्धांत आकर्षित होगा। यद्धपि बाद के खरीददार ने सदभाव में खरीदा और उसके अधिकारों को धारा 19 (बी) के तहत सरंक्षित किया गया- दूसरा विक्रय का प्रथम विक्रय पर अधिभावी प्रभाव नहीं हो सकता- इससे भी अधिक यह स्पष्ट है कि जब वादी ने विनिर्दिष्ट पालन के लिए मुकदमा दायर किया था तो वह अनुबंध के अपने भाग को पूरा करने के लिए तैयार व इच्छुक रहा था- विशिष्ट अनुतोष अधिनियम 1963- धारा 19(बी)।

प्रथम प्रतिवादी-स्वामी ने वादी के साथ संपति के विक्रय के लिए एक करार किया। वादी ने बयाना राशि का भुगतान किया हालांकि निर्धारित अवधि में शेष राशि का भुगतान नहीं किया। वादी ने संविदा की विशिष्ट पालना के लिए वाद पत्र पेश किया। दो दिन बाद प्रथम प्रतिवादी ने पुनः संपति का बेचान अपीलकर्ता को उची दर पर बेचान

कर दिया और कब्जा अपीलकर्ता को सौंप दिया। विचारण न्यायालय द्वारा वाद पत्र खारिज किया गया। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा विशिष्ट पालना के लिए वाद को डिक्री किया गया। यह पाया गया कि अपीलकर्ता द्वारा की गयी पश्चातवृति क्रय सदभावी मूल्य पर और बिना विक्रय के करार की सूचना के था। व्यथित दूसरे क्रेता-अपीलकर्ता द्वारा अपील दायर की गयी। उच्च न्यायालय के खंड पीठ द्वारा इसे खारिज किया गया इसलिए वर्तमान अपील।

इस अपील में विचार हेतु जो प्रश्न उठा वह यह था कि स्वामी द्वारा उसी संपति का पश्चातवृति विक्रय दूसरे क्रेता को करने पर लंबित वाद का क्या प्रभाव पड़ेगा।

कोर्ट ने अपील खारिज की।

अभिनिर्धारितः 1.1 धारा 19 विशिष्ट अनुतोष अधिनियम 1963 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पश्चातवृति विक्रय को अच्छे और पर्याप्त कारण के लिए लागू किया जा सकता है, लेकिन वर्तमान मामले में कोइ कठिनाई नहीं है क्योंकि वाद 03-05-1975 को करार के विशिष्ट पालन के लिए दायर किया गया था और दूसरा विक्रय 05-05-1975 को हुआ था। यदि यह स्थिति नहीं होती तो धारा 52 संपति हस्तांतरण अधिनियम सपठित धारा 19 के प्रभाव का मूल्याकंन किया गया होता, लेकिन वर्तमान मामले में यह अधिक स्पष्ट है कि मुकदमा संपति का दोबारा विक्रय से पहले ही दायर किया जा चुका था इसलिए लिस पेंडेंस का सिद्धांत वर्तमान मामले को नियंत्रित करेगा और दूसरे विक्रय का पहले विक्रय पर अधिभावी प्रभाव नहीं हो सकता। लिस पेंडेंस का सिद्धांत अभी कानून का स्थापित सिद्धांत है [पैरा 3] [439 एफ, जी; 440 ए , बी]

1.2 सामान्यतया एक सार्वजनिक नीति के रूप में एक बार संपति के किसी भी विषय से संबंधित मुकदमा दायर किया गया है। इस तरह की मुकदमेबाजी को समाप्त करने के लिए लिस पेंडेस का सिद्धांत विकसित किया गया है ताकि मुकदमेबाजी अंततः

किसी तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप के बिना समाप्त हो सके। यह सार्वजनिक नीति के कारण है अन्यथा कोइ भी मुकदमा समाप्त नहीं होगा इसलिए संपति के उसी विषय को बाद में किसी तीसरे व्यक्ति को बेचान से हतोत्साहित करने के लिए इस प्रकार के लेनदेन की जांच की जानी चाहिए। अन्यथा मुकदमेबाजी कभी समाप्त नहीं होगी।

श्रीमती राम पियरी और अन्य बनाम गौरी और अन्य **ए आइ आर 1978 आल. 318-स्वीकृत।**

2.1 वर्तमान मामले में यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ता जो उसी संपति का पश्चातवृति खरीददार है उसने अच्छे विश्वास में संपति खरीदी है, लेकिन लिस पेंडेस का सिद्धांत निश्चित रूप से इस तथ्य के बावजूद वर्तमान मामले पर लागू होगा। धारा 19 (बी) विशिष्ट अनुतोष अधिनियम के तहत उनके अधिकारों की रक्षा की जा सकती है।

आर के मोहम्मद उब्बेदुल्ला और अन्य बनाम हाजी सी. अब्दुल वहाद (डी) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य एआईआर 2000 एससी 1658- रेफर।

2.2 दूसरा क्रेता मुकदमे में प्रतिवादी था और इस दलील पर की वादी अनुबंध को अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था इसपर भी उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने विचार किया। यह पाया गया कि वाद में पर्याप्त आरोप लगाए गए थे कि वादी अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था इसलिए इस निष्कर्ष से यह स्पष्ट है कि वादी ने अनुबंध के विनिर्दिष्ट पालन के लिए मुकदमा दायर करते समय अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक, था हालांकि इस तर्क पर खंड पीठ के समक्ष विशेष रूप से बहस नहीं की गयी थी। एक मात्र सवाल जो तर्क दिया गया था वह यह था कि क्या लिस पेंडेंस का सिद्धांत लागू होगा या विशिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 19 का अत्याधिक प्रभाव होगा। वर्तमान मामले में लिस पेंडेंस का सिद्धांत लागू होगा क्योंकि मुकदमा दायर होने

के बाद दूसरा विक्रय हुआ है इसलिए उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है और अपील में कोई योग्यता नहीं पायी गयी है।

राम अवध (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि और अन्य बनाम अछैबर दुबे और अन्य (2002) 2 एससीसी 428 जुगराज सिंह और अन्य बनाम लाभ सिंह और अन्य (1995) 2 एससीसी 31 – रैफर।

सिविल अपील क्षेत्राधिकारः सिविल अपील नं. 6764/2001

मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा एल.पी.ए. नं. 147/1990 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 19.10.2000 से।

अपीलकर्ता की ओर से एस. गणेश, सी. मणीशंकर, प्रताप वुनुगोपाल सुरेखारमण और दिलीप पी.।

प्रत्यर्थी की ओ से एस. बालाजी, एस.आर. शर्मा, मधुस्मिता बोरा, एस. श्रीनिवासन और एम.जे. पॉल।

न्यायालय का निर्णय **ए. के. माथुर, जे.** द्वारा पारित किया गया।

1. यह अपील मद्रास उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच द्वारा पारित आदेश दिनांक 19.10.2000 के खिलाफ निर्देशित है, जिसके तहत डिविजन बेंच ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निर्णय व डिक्री को पुष्टि करने वाली अपील को खारीज कर दिया। इसलिए वर्तमान अपील।

2. संक्षिप्त तथ्य जो इस अपील के निस्तारण के लिए आवश्यक है, विनिर्दिष्ट पालन के लिए एक वाद दिनांक 04-07-1974 के विक्रय करार के आधार पर दायर किया गया था, जिसके तहत मुकदमें में पहली प्रतिवादी ने अपने पति और पावर ऑफ एटॉर्नी धारक के माध्यम से 30,000 रूपये की राशि में गृह संपति विक्रय करने का अनुबंध किया था।5,000 रूपये की राशि का भुगतान अग्रिम किया गया तथा शेष 25,000

रूपये का भुगतान दिनांक 31-07-1974 से पूर्व किया जाना था। उक्त राशि का भुगतान दिनांक 31-07-1974 तक नहीं किया गया। स्वामी ने 05-05-1974 को विवादित संपति पुनः अपीलकर्ता को 4,500 रूपये में विक्रय कर दी और विवादित संपति का कब्जा अपीलकर्ता को सौंप दिया। इसलिए वादी ने संविदा की विनिर्दिष्ट अनुपालना के लिए उपर्युक्त वाद दायर किया। विचारण न्यायालय ने वाद खारिज यह अवधारित करते हुए कर दिया कि करार वास्तविक था परन्तु प्रतिवादी स्वामी द्वारा एक झूठी कहानी पेश की गई कि उसने शराब के प्रभाव में करार कर हस्ताक्षर किये थे और आगे यह अभिनिधार्रित किया की प्रतिवादी जो हमारे समक्ष अपीलकर्ता है उसने विवादित संपति सदभाविक प्रतिफल में क्रय की थी इसलिए विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री वादी के पक्ष में पारित नहीं की जा सकी और विद्वान विचारण न्यायालय ने वाद खारिज कर दिया। अपील पर विद्वान एकल न्यायाधीश ने विचारण न्यायालय के द्वारा पारित निर्णय व डिक्री को उलट दिया और विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद को डिक्री कर दिया। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर द्वितीय क्रेता (यहा अपीलकर्ता) द्वारा डिविजन बेंच के समक्ष अपील दायर की गयी थी और दूसरे क्रेता की वह अपील डिविजन बेंच द्वारा अपने आदेश दिनांक 19-10-2000 के द्वारा खारिज कर दी गयी और इसलिए अनुमति प्रदान करने पर वर्तमान अपील।

3. हमने पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना और रिकॉर्ड का अवलोकन किया। यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि अपीलार्थी द्वारा दूसरी खरीद 5.5.1975 को की गई यानी 03-05-1975 को विनिर्दिष्ट पालन के लिए दायर दावा के दो दिन बाद। यद्यपि धारा 52 संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 की प्रयोज्यता पर विचारण न्यायालय द्वारा विचार नहीं किया गया था, हालांकि, प्रथम अपीलीय न्यायालय अर्थात विद्वान एकल न्यायाधीश ने विशिष्ट पालन के लिए डिक्री देते समय पाया की अपीलकर्ता-प्रतिवादी द्वारा की गयी पश्चातवर्ती खरीद भी मूल्य के लिए सदभाविक थी

और बेचने के समझौते की सूचना के बिना लेकिन उक्त बिक्री उस डिक्री के अधीन थी जो विशिष्ट पालन के लिए मुकदमे में की जा सकती थी, जिसे दूसरे क्रेता के पक्ष में विक्रय से पहले दायर किया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष जो मुख्य तर्क दिया गया वह धारा 19 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 में यह प्रावधान है कि मूल अनुबंध की सूचना के बिना सद्भावी विश्वास में पैसे का भुगतान करने वाले बाद के खरीददार के खिलाफ विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री लागू की जा सकती है क्योकि यह विक्रेता के साथ-साथ पूरी दुनिया के खिलाफ आबद्धकारी है। इसके विपरित उत्तरदाताओं द्वारा तर्क दिया गया कि संपति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 52 जो लिस पेंडेस के सिद्धांत को बताती है कि जब कोई मुकदमा लंबित है तो ऐसे मुकदमे के लंबित रहने के दौरान यदि विक्रय किसी अन्य व्यक्ति के पक्ष में किया जाता है तब लिस पेंडेस का सिद्धांत आकर्षित होगा। इस प्रस्ताव के समर्थन में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ का निर्णय श्रीमती राम पियरी और अन्य बनाम गौरी और अन्य [ए.आई.आर. 1978 इला. 318] साथ ही मद्रास उच्च न्यायालय की एक खंड पीठ के निर्णय को सेवा में प्रस्तुत किया। इसलिए इस मामले में हमारे सामने प्रश्न यह है कि मालिक द्वारा दूसरे खरीददार को उसी संपति के पश्चातवृति विक्रय पर लिस पेंडेस का क्या प्रभाव पडता है। विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 19 स्पष्ट रूप से कहती है कि पश्चातवृति विक्रय को अच्छे और पर्याप्त कारण के लिए लागू किया जा सकता है, लेकिन वर्तमान मामले में, कोई कठिनाई नहीं है क्योंकि समझौते के विनिर्दिष्ट पालन के लिए 3.5.1975 को वाद दायर किया गया था और दूसरा विक्रय 5.5.1975 को हुआ था इसलिए यह स्वीकृत स्थिति है की दूसरा विक्रय निश्चित रूप से विवादित वाद दायर होने के बाद हुआ था। यदि ऐसी स्थिति नहीं होती तो हम धारा 19 विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम सपठित धारा 52 संपति हस्तांतरण अधिनियम के प्रभाव का मुल्यांकन कर चुके होते लेकिन वर्तमान मामले में यह स्पष्ट है कि वाद संपति के दूसरे विक्रय से पहले दायर

किया गया था इसलिए लिस पेंडेस का सिद्धांत वर्तमान मामले को नियत्रित करेगा और दूसरे विक्रय का पहले विक्रय पर अधिभावी प्रभाव नहीं हो सकता है। लिस पेंडेस का सिद्धांत अभी भी विधि का स्थापित सिद्धांत है। इस संबंध में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने श्रीमती राम पियारी (पूर्वोक्त) में धारा 52 संपति हस्तांतरण अधिनियम के दायरे पर विचार किया है। पूर्ण पीठ ने बेल्लामी बनाम सबीन [(1857) 44 ई. आर. 842 पृष्ठ 843 के एक निर्णय का उल्लेख किया है। जिसमें इसे निम्नलिखित रूप में देखा गया थाः

> "नोटिस के सिद्धांत के माध्यम से क्रेता को प्रभावित करने वाले लिस पेंडेस के बारे में बात करना शायद ही सही है। हालांकि निःसंदेह न्यायालयों की भाषा अक्सर इसके संचालन का वर्णन करती है। यह उसे प्रभावित करता है इसलिए नहीं की यह नोटिस के बराबर है, बल्कि इसलिए की कानून इसकी अनुमति नहीं देता है कि मुकदमेबाजी करने वाले पक्षों को मुकदमे के लंबित रहने के दौरान विवादग्रस्त संपति में दूसरों को अधिकार प्रदान कर दिये जाए ताकि विपरीत पक्ष पर प्रतिकूल प्रभाव डाला जा सके।
>
> जहां किसी विशेष संपति के अधिकार के संबंध में वादी और प्रतिवादी के बीच मुकदमा लंबित है, मानव जाति की आवश्यकतानुसार मुकदमें में न्यायालय का निर्णय न केवल वादी पक्षों पर बल्कि उन लोगों पर भी लागू होगा जो मुकदमें के लबिंत रखने के दौरान किये गए अलगाव के माध्यम से उनके अंतर्गत स्वामित्व प्राप्त करे, चाहे ऐसे अलग-थलग लोगों को लंबित कार्यवाही की सूचना थी या नहीं थी। यदि ऐसा नहीं होता तो इस बात की कोइ निश्चितता नहीं की मुकदमा कभी समाप्त होगा।"

इसी प्रकार फ़ैयाज़ हुसैन खान बनाम मुंशी प्राग नारायण [(1907) 34 इंड ऐप 102] में प्रिवी कौंसिल में न्यायालय ने अंतिम निर्णय और अवलोकन की आवश्यकता पर जोर दिया कि अन्यथा मुकदमेबाजी का कोइ अंत नहीं होगा और न्याय पराजीत हो जाएगा। इलाहाबाद उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने आगे स्टोरी ऑन इक्विटी तीसरा संस्करण(पैरा 406) का उल्लेख किया जिसमें लिस पेंडेस के सिद्धांत को निम्नलिखित शब्दों में समझाया गया हैः

आम तौर पर यह सच है कि न्यायालय का निर्णय केवल पक्षकारों और अभ्यावेदन में निजता या संपदा को बाध्य करता है, लेकिन वह जो किसी कार्रवाई के लंबित रहने के दौरान क्रय करता है उस निर्णय से बंधा हुआ है, जो उस व्यक्ति के विरूद्ध हो सकता है जिससे उसे अधिकार उत्पन्न होता है। वाद के पक्षकार अधिकार उत्पन्न होने की सूचना से मुक्त है और ऐसा क्रेता को कार्रवाई में पक्षकार बनाने की अवश्यकता नहीं है। जहां कही भी एक वास्तविक एवं उचित क्रय बिना सूचना के की जाती है तो यह नियम बमुश्किल काम कर सकता है लेकिन यह नियम एक महान सार्वजनिक नीति पर निर्भर है। अन्यथा कार्रवाई के दौरान परिर्वतन सम्पूर्ण उद्देश्य को समाप्त कर सकता है और मुकदमेबाजी का अंत नहीं हो सकेगा इसलिए मैग्जीम पेंडेंट एलाइट, निहील इनोवेटर जिसका प्रभाव समाप्त करने के लिए नहीं बल्कि वाद के पक्षकारों के अधिकारों को सुरक्षित करना है।

सामान्यतया एक सार्वजनिक नीति के रूप में एक बार संपति के किसी भी विषय से संबंधित मुकदमा दायर किया गया है। इस तरह की मुकदमेबाजी को समाप्त करने के लिए लिस पेंडेस का सिद्धांत विकसित किया गया है ताकि मुकदमेबाजी अंततः किसी तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप के बिना समाप्त हो सके। यह सार्वजनिक नीति के कारण है अन्यथा कोइ भी मुकदमा समाप्त नहीं होगा इसलिए संपति के उसी विषय को बाद में

किसी तीसरे व्यक्ति को बेचान से हतोत्साहित करने के लिए इस प्रकार के लेनदेन की जांच की जानी चाहिए। अन्यथा मुकदमेबाजी कभी समाप्त नहीं होगी।

4. हमारा ध्यान इस न्यायालय के एक निर्णय आर. के मोहम्मद उबे दुल्लाह एवं अन्य बनाम हाजी सी अब्दुल वहाब (डी) द्वारा एल. आरस. और अन्य। [ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 1658] की ओर आकर्षित किया गया था। इस मामले में यह देखा गया था कि जिस व्यक्ति ने संपति खरीदी है उसे उक्त संपति के संबंध में यह पता लगाने के लिए आवश्यक प्रयास करना चाहिए कि जिस व्यक्ति से वह खरीद कर रहा है उसका स्वामित्व या हित ऐसी संपति पर वास्तविक रूप से है या नहीं इस मामले में वादी ने अनुबंध के विनिर्दिष्ट पालन के लिए मुकदमा दायर किया और मुकदमें के लंबित रहने के दौरान शेष प्रतिवादियों ने प्रतिवादी द्वारा बिक्री के बाद के लेनदेन को अपने पक्ष में लाते हुए मुकदमे की संपति पर स्वामित्व का दावा किया। इस आधार पर की वे वादी के पक्ष में पूर्व समझौतों की सूचना के बिना मूल्य के लिए वास्तविक खरीददार थे और वे यह भी जानते थे कि वादी पिछले कइ वर्षों से किरायेदार के रूप में मुकदमें की संपति पर काबिज था और उन्होंने इस बात के अलावा कोइ पूछताछ नहीं की कि उनके पक्ष में विक्रय विलेख के निष्पादन की तारीख पर वादी का मुकदमें की संपति में कोइ और या अन्य हित था या नहीं। किरायेदार के रूप में संपति पर कब्जा था। उस संदर्भ में उनके आधिपत्य ने देखा की बाद के खरीदार को वाद समझौते की सूचना के बिना मूल्य के लिए विवादित संपति का वास्तविक खरीदार नहीं कहा जा सकता है और वादी विनिर्दिष्ट पालन का हकदार होगा। विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 19 के साथ-साथ धारा 52 संपति हस्तांतरण अधिनियम के प्रभाव को विचार करने के बाद यह माना की बाद के खरीददार को वादग्रस्त संपति खरीदने से पहले जागरूक होना होगा। जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ता जो उसी संपति का बाद का खरीददार है उसने अच्छे विश्वास में खरीदा है, लेकिन लिस पेंडेस का सिद्धांत

निश्चित रूप से इस तथ्य के बावजूद वर्तमान मामले पर लागू होगा। धारा19 (बी) विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम के तहत उनके अधिकारों की रक्षा की जा सकती है।

5. अपीलकर्ता की अेार से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री एस गणेश ने हमें समझाने की कोशिश की है कि वादी ने यह साबित और अभिकथित नहीं किया की वह अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था। यह बिन्दु उठाना दूसरे खरीदार के लिए खुला है और इसके समर्थन में इस न्यायालय के एक निर्णय राम अवध (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधी एवं अन्य बनाम अछैबर दुबे एवं अन्य [(2000) 2 एस. सी. सी. 428] पर भरोसा किया जिसमें यह देखा की धारा 16 द्वारा न्यायालय पर एक दायित्व लगाया गया है कि वह उस वादी को विनिर्दिष्ट पालन न दे जिसने खंड (ए), (बी) और (सी) की आवश्यकताअेा को पूरा नहीं किया है। आगे यह देखा गया की न्यायालय वादी को विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री देने के लिए बाध्य नहीं है, जो यह साबित करने में विफल रहा है कि उसने अपने समझौते के अपने हिस्से के विनिर्दिष्ट पालन को निष्पादित किया है या करने के लिए हमेशा तैयार या इच्छुक है इसलिए ऐसी याचिका संपति के बाद के खरीदार या उसके विधिक प्रतिनिधियों के द्वारा उठायी जा सकती है, जो मुकदमे में प्रतिवादी थे। इसी तरह जुगराज सिंह और अन्य बनाम लाभसिंह एवं अन्य [(1995) 2 एससीसी 31], में इस बात पर भी जोर दिया गया है कि वादी को यह साबित करना था कि अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था। यह उनका निजी मामला है बाद के खरीददारो को केवल इस आधार पर अपनी खरीद का बचाव करने का अधिकार मिला है कि उन्हें वादी के साथ विक्रय समझौते के बारे में कोइ पूर्व जानकारी नहीं है। वे मूल्यवान प्रतिफल के लिए वास्तविक खरीददार है। हालांकि वे मुकदमें में आवश्यक पक्षकार नहीं थे, लेकिन वर्तमान मामले में दूसरा क्रेता मुकदमे में प्रतिवादी था और इस याचिका पर भी विद्वान एकल न्यायाधीश ने विचार किया और पाया की वाद में पयार्प्त आरोप लगाये गए थे कि

वादी अनुबंध के अपने हिस्से का पालन करने के लिए तैयार और इच्छुक था। इस पहलू को विद्वान एकल न्यायाधीश ने आदेश दिनांक 24-07-1990 में निपटाया था और पैराग्राफ 8 में विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नानुसार विचार किया था।

> "इन प्रस्तुतियों में से पहले पर, मैं पाता हूँ कि वाद के पैराग्राफ 7 में निश्चित दलील के विपरित वादी अपनी अेार से उस समझौते को निष्पादित करने के लिए तैया रहा है और अभी भी तैयार है और अभी भी तैयार है और स्वेच्छा से जिसका प्रथम प्रतिवादी को सूचना थी। पहले प्रतिवादी के लिखित कथन में एकमात्र दलील यह है कि वादी के पैरा 7 में यह आरोप है कि इस प्रतिवादी को इस अनुबंध के बारे में पता था। इसे गलत ठहराया गया है। इस प्रकार यह पाया गया कि इसमें कोई इंकार नहीं है सभी दलील यह है कि वादी अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था। इसी तरह दूसरे प्रतिवादी ने भी अपने लिखित कथन में उक्त दलील से इंकार नहीं किया है। इसके अलावा वाद पत्र के पैरा 5 में विशिष्ट कथन के लिए 1974 के जुलाई के बाद दिनों में वादी ने प्रतिवादियों को विक्रय पूरा करने के लिए अपनी तत्परता के बारे में सूचित किया जिसकी कोई विशिष्ट इंकारी नहीं की गई। प्रथम प्रतिवादी केवल एक अस्पष्ट और टालमटोल इंकार इस प्रकार हैः
>
> वाद के पैरा 5 में शामिल आरोप तुच्छ है और नकारे गए है इसी तरह दूसरे प्रतिवादी ने भी वाद पत्र में उपरोक्त कथन का विशेष रूप से खंडन नहीं किया है।"

इसलिए इस निष्कर्ष से यह अधिक स्पष्ट है कि वादी ने अनुबंध के विशिष्ट पालन के लिए मुकदमा दायर करते समय अनुबंध के अपने हिस्से को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था। हालाकि इस तर्क पर डिवीजन बेंच के समक्ष विशेष रूप से बहस नहीं की गइ थी। एक मात्र जो तर्क दिया गया था वह यह था कि क्या लिस पेंडेस का सिद्धांत लागू होगा या धारा 19 विशिष्ट अनुतोष अधिनियम का अधिभावी प्रभाव होगा जिसका उत्तर हम पहले ही दे चुके है। वर्तमान मामले में लिस पेंडेस का सिद्धांत लागू होगा क्योकि मुकदमा दायर होने के बाद दूसरी बार विक्रय हुआ है इसलिए उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण सही है अेार हमें इस अपील में कोइ योग्यता नहीं मिली और तदनुसार कोष्ठ के संबंध में कोइ आदेश दिए बिना इसे खारिज कर दिया गया है।

एन. जे.

याचिका खारिज की जाती है।

[यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी **कमल सोनी (आर.जे.एस.),** द्वारा किया गया है।]

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।